INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH AND TECHNOLOGY
ISSN 2582-7359
PEER REVIEW JOURNAL
IMPACT FACTOR 6.325

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में श्रीमद्भगवत् गीता की उपयोगिता का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. राहुल
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र, गाँधी आदर्श महाविद्यालय, समालखा, पानीपत, हरियाणा

भूमिका -

भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वप्राचीन एवं सर्वश्रेष्ठ संस्कृति है। भारतीय संस्कृति को अलंकृत एवं प्रफूल्लित करने में हमारे ऋषि मुनियों का महद् योगदान रहा है, जिन्होनें अपने ध्यान एवं तपयज्ञ जैसे अलौकिक क्रियायों द्वारा ज्ञानरूपी शाश्वत ज्योति का दर्शन करके इस जगत में अज्ञानरूपी तिमिर को दूर किया है। यही कारण है कि आज ऋषि मुनियों द्वारा प्रचारित एवं प्रसारित यह संस्कृति न केवल भारत को अपितु सम्पूर्ण विश्व को ज्ञानपथ की ओर अग्रसरित कर रही है।

हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा लिखे गये ग्रन्थ यथा – वेद, वेदाङ्ग, उपनिषद्, ब्राह्मण, आरण्यक एवं श्रीमद्भगवद्गीता आदि इस जगत के मूलाधार हैं। अर्थात् इन्हीं को आधार मानकर ही जन्म से मृत्यु पर्यन्त सम्पूर्ण क्रियायों का निर्वहन किया जाता है। परन्तु इन सभी ग्रन्थों में भी जो स्थान श्रीमद्भगवद्गीता का माना जाता है, वह अपने आप में अद्वितीय है। अतः भगवद् गीता को सकल शास्त्रों एवं सम्पूर्ण उपनिषदों का सारभूत ग्रन्थ कहा जाता है।

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः

श्रीमद्भगवद्गीता की हमारे जीवन में महत्तपूर्ण उपयोगिता है। किसी भी क्षेत्र में गीता से हम मार्गदर्शन ले सकते हैं। गीता जीवन की मार्गदर्शिका है, पाथेय है, और भौतिक ज्ञान से लेकर के आध्यात्मिक ज्ञान की कुञ्जी है। आज देश बहुत ही विषम परिस्थितियों से गुजर रहा है। जीवन के हर क्षेत्र में हमें न जाने कितने कौरवों और कंस से सामना करना पड रहा है। इनका कुछ न कुछ भाग हमारे अंदर भी है। हम अपने आप में अर्जुन भी हैं तो कही न कही हम में दुर्योधन भी छुपा है। हमारे अंदर छुपा दुर्योधन आज इस देश के लिए परेशानी का कारण बना हुआ है।

इसी दुर्योधन रूपी अज्ञान को हटाने के लिये गीता हमें प्रेरणा प्रदान करती है। महाभारत के युद्ध में जब कौरव अर्जुन के सामने युद्धार्थ उपस्थित थे तब भगवान श्रीकृष्ण ने गीता के माध्यम से अर्जुन को 18 अध्यायों में कर्म के प्रति जागृत होने के लिये उपदेश दिया। वही उपदेश न केवल अर्जुन के लिये था अपितु सम्पूर्ण जनमानस के लिये अर्जुन को निमित्त मात्र बना कर दिया। वह उपदेश इतना महत्त्वपूर्ण था कि आज भी वह समाज में स्थित समस्त अध्यापक व छात्रों का मार्गदर्शन करता है।

श्रीमद्भगवद्गीता महाभारत के युद्ध के समय में भगवान श्रीकृष्ण ने अपने मुखारविन्द से हतोत्साहित अर्जुन को सुनायी थी, परन्तु आज ऐसा प्रतीत होता है कि भगवद् गीता का यह वचन केवल अर्जुन के लिये ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार के लिये किया गया था। श्रीमद्भगवद्गीता में अनेक विषय वर्णित हैं। गीता के माहात्म्य के विषय में प्रायः सभी लोग जानते ही हैं, पुनरपि विषय – "वैश्विक परिप्रेक्ष्य में श्रीमद्भगवद्गीता की उपयोगिता" होने के कारण तथा सम्पूर्ण विश्व को शुरुवात से अर्थात् छात्र-जीवन से ही गीता की क्या-क्या आवश्यकता व उपयोगिता है, वह संक्षेप में इस प्रकार वर्णन किया जा रहा है –

1.कर्त्तव्यनिष्ठता -

छात्र को कर्त्तव्यनिष्ठ होना चाहिये। छात्र सदैव अपने कर्त्तव्य के ओर ध्यान दे तो उसका जीवन सार्थक हो सकता है। क्योंकि कर्त्तव्यनिष्ठता ही एक ऐसा साधन है जो छात्र को उसकी अन्तिम सफलता तक पहुँचा सकता है। आज कल समाज में जिस परिस्थिति से छात्र अनेक समस्याओं का समाधान कर रहे हैं, उस परिस्थिति में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि किसी काम को करने से पूर्व उस काम का लाभ क्या होगा। जैसा कि यह सर्वविदित है कि मन्द व्यक्ति भी निष्प्रयोजन से एक कदम भी आगे नहीं बढाता।

इसप्रकार सभी प्रयोजन देखते हैं। छात्रों का तो कहना ही क्या है। छात्र कर्म करने से पूर्व ही यह जानना आवश्यक समझते हैं कि इसका फल क्यो होगा, एवं फल की इच्छा करते हुए कर्म ही भूल जाते हैं। छात्रों का मुख्य कर्त्तव्य स्वाध्याय अथवा अध्ययन है। अध्ययन ही

उनका परम लक्ष्य होना चाहिये, इसका फल क्या होगा यह कभी भी आशा नहीं करनी चाहिये।

क्योंकि कर्म करने में तो मनुष्य स्वतन्त्र है, परन्तु फल देने वाला वह परमपिता परमात्मा है। यथोक्तं –

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि।।[1]

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है कि - हे अर्जुन। तेरा कर्म में अधिकार है, फलप्राप्ति में तेरा अधिकार नहीं है। फल तो उस विश्वनियन्ता परमात्मा के अधीन है। अतः तुम कर्मफल का हेतु मत बनो। तात्पर्यार्थ यह है कि छात्र को अध्ययन करना का तो अधिकार है परन्तु इसका फल क्या होगा, यह छात्र के हाथ में नहीं है। अतः छात्र को केवल अध्ययन रूपी कर्त्तव्य में तत्पर होना चाहिये। किसी कवि ने छात्रकर्तव्य की ओर संकेत करते हुए कहा है कि –

प्रथमे नार्जिता विद्या, द्वितीये नार्जितं धनं, तृतीये नार्जितं पुण्यं, चतुर्थे किं करिष्यति।

अर्थात् विद्यार्थी जीवन में अगर विद्या प्राप्त नहीं की, गृहस्थ में धनोपार्जन नहीं किया, वानप्रस्थ में पुण्यार्जन नहीं किया तो अन्तिम क्या करोगो। अर्थात् विद्यार्थी जीवन में विद्या ही सर्वप्रमुख है। इसी प्रसंग को आगे बढाते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि –

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ। ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि।।[2]

अर्थात् परिस्थिति कैसी भी क्यों न हो (यथा सर्दी-गर्मी, सुख-दुख, लाभ-हानि) छात्र को अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं होना होना चाहिये। क्योंकि समत्त्व बुद्धि युक्त पुरुष को सफलता ही मिलती है।

2. आत्मज्ञानी -

श्रीमद्भगवद्गीता मनुष्यों को आत्मज्ञानी करती है। मनुष्य को उसका आधार बताती है। गीता ही आत्मज्ञान का उत्थान करती है। छात्रों को भी चाहीये कि सबसे पहले वे अपने आप को जान ले। क्योंकि आजकल होता क्या है, सभी दूसरों को ही देखने में लगे रहते हैं। अपने विषय में कुछ जानते नहीं है। अतः गीता अपने शरीर का आधार बताते हुए कहती है कि –

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः। उभयोरपि
दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।[3]

अर्थात् भौतिक शरीर (असत्) का तो कोई चिरस्थायित्व नहीं है, किन्तु आत्मा (सत्) अपरिवर्तित रहता है। इसप्रकार तत्त्वदर्शियों ने इन दोनो की प्रकृति के अध्ययन के द्वारा यह निष्कर्ष निकाला है। यही बात छात्रों को समझना चाहिये कि यह शरीर तो नश्वर है, कभी भी नाश हो सकता है, वैज्ञानिकों के अनुसार विभिन्न कोशिकाओं की क्रिया-प्रतिक्रिया द्वारा शरीर प्रतिक्षण बदलता रहता है। इस तरह शरीर में वृद्धि तथा वृद्धावस्था आती रहती है। किन्तु शरीर तथा मन में निरन्तर परिवर्तन होने पर भी आत्मा स्थायी रहता है। यथोक्तं –

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।

अजो नित्यः शाश्वतोऽपुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।[4]

आत्मा के लिये किसी भी काल में न तो जन्म है और न ही मृत्यु। वह अजन्मा, नित्य, शाश्वत तथा पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी वह नही मरता है। इसी प्रकार-

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च। नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं
सनातनः।[5]

यह आत्मा न तो किसी शस्त्र से द्वारा खण्डित किया जा सकता है, न अग्नि द्वारा जलाया जा सकता है, न जल द्वार भिगोया जा सकता है, न वायु द्वारा सुखाया जा सकता है। अतः यह आत्मा शाश्वत, सर्वव्यापी, अविकारी तथा सदैव एक सा रहने वाला है।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।।

जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा पुराने तथा व्यर्थ के शरीरों के त्यागकर नवीन भौतिक शरीर धारण करता है। अतः छात्र अपने अन्दर स्थित प्रतिभा को स्वयं पहचाने एवं उसके अनुसार अपना निस्वार्थ कर्म शुरु कर दे।

3.जितेन्द्रियत्वं -

छात्रों को जितेन्द्रिय होना चाहिये। अपने मन को अपने हिसाब से चलाना चाहिये। मन के अनुसार अगर छात्र चलने लगा तो विभिन्न विषयों में लिप्त होता हुआ नष्ट हो सकता है। क्योंकि इन्द्रियाँ इतनी प्रवल हैं कि विवेकी पुरुष के मन को भी हर लेती हैं। यथा-

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः। इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।[6]

अर्थात् इन्द्रियाँ इतनी वेगवान् हैं कि विवेकी पुरुष के मन को भी बलपूर्वक हर लेती है, जो उन्हें वश में करने का प्रयत्न भी करता है। छात्रों को सदैव अपने मन को पूर्णतया वश में रखते हुए इन्द्रिय-संयमन करें, इन्द्रियों के वशीभूत होने से मन एकाग्र हो जाता है तथा बुद्धि भी स्थिर हो जायेगी, पुनः छात्र अपने स्वाध्याय रूपी कर्त्तव्य को पूर्ण कर सकता है। अगर छात्र मन को एकाग्र नहीं करता है और भौतिक विषयों में लिप्त हो गया तो वह उन

विषयों से युक्त आसक्ति में लग जायेगा, और ऐसी आसक्ति से काम उत्पन्न होता है, काम से क्रोध, क्रोध से मोह, मोह से स्मृति विभ्रम, स्मृति विभ्रम से बुद्धि नष्ट हो जाती है, और बुद्धि नष्ट होने पर वह भव-कूप में पुनः गिर जाता है। यथोक्तं –

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।[7]

आत्मा को नष्ट करने वाले नरक के तीन द्वार माने गए हैं, काम, क्रोध और लोभ। यदि कोई नरक से बचना चाहे तो काम, क्रोध और लोभ इन तीनों का परित्याग करे। जैसे कि गीता में कहा गया है कि -

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्रयं त्यजेत्।।[8]

4. श्रद्धावान् –

छात्रों में एक और गुण होना चाहिये, श्रद्धा। श्रद्धा से युक्त छात्र तत्त्वज्ञान प्राप्त करता है। यथोक्तं -

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः। ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।।[9]

भगवद्गीता सभी प्रामाणिक एवं मान्य शास्त्रों में सर्वोत्तम है। जो लोग पशुतुल्य हैं उनमें न तो प्रामाणिक शास्त्रों के प्रति कोई श्रद्धा है और न उनका ज्ञान होता है और कुछ लोगों को यद्यपि उनका ज्ञान होता है और उनमें से वे उद्धरण देते रहते हैं, किन्तु उनमें वास्तविक विश्वास नहीं करते। यहाँ तक कि कुछ लोग जिनमें भगवद्गीता जैसे शास्त्रों में श्रद्धा होती भी है फिर वे न तो भगवान् कृष्ण में विश्वास करते हैं, न उनकी पूजा करते हैं। ऐसे लोगों को तत्त्वज्ञान नहीं हो पाता। वे नीचे गिरते हैं। उपर्युक्त सभी कोटि के व्यक्तियों में जो श्रद्धालु नहीं हैं और

सदैव संशयग्रस्त रहते हैं, वे तनिक भी उन्नति नहीं कर पाते। जो लोग ईश्वर तथा उनके वचनों में श्रद्धा नहीं रखते उन्हें न तो इस संसार में और न भावी लोक में कुछ हाथ लगता है। उनके लिये किसी भी प्रकार का सुख नहीं है। अतः मनुष्य को चाहिये कि श्रद्धाभाव से शास्त्रों के सिद्धान्तों का पालन करे और ज्ञान प्राप्त करे। इसी ज्ञान से मनुष्य आध्यात्मिक अनुभूति के दिव्य पद तक पहुँच [1]सकता है। दूसरे शब्दों में आध्यात्मिक उत्थान में संशयग्रस्त मनुष्यों को कोई स्थान नहीं मिलता है। अतः मनुष्य को चाहिये कि परम्परा से चले आ रहे महान आचार्यों के पदचिह्नों का अनुकरण करे और सफलता प्राप्त करे। यतो हि गीता में कहा गया है कि श्रद्धाविहीन व्यक्ति न तो इस लोक में सुख प्राप्त करता है और न ही परलोक में। यथोक्तं –

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति। नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः।।[10]

इसी बात की विस्तृत रूप में व्याख्या करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि – श्रद्धा से रहित किया हुआ कोई भी काम सफल नहीं होता है, उसका कोई भी फल न तो मरने के बाद मिलने वाला है और न ही जीते जी मिलता है। यथोक्तं -

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्। असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।[11]

5. साम्यवादिता व सन्तुलनता

वर्त्तमान समाज में एक बहुत बडा भयंकर काल मंडरा रहा है, जिसमें कि सभी मनुष्य फसे हुये हैं, जो कि जातिवाद के नाम से प्रसिद्ध है। वर्तमान में स्कूल जाने वाले छात्र भी यह कहना शुरु कर देते हैं कि वह वैश्य है अथवा वह शूद्र है। आज समाज उत्पन्न होते ही किसी भी मनुष्य को ब्राह्मण अथवा शूद्र के रूप में मानना शुरु कर देता है जो कि शत प्रतिशत गलत है। शास्त्रों में कहा गया है कि - **जन्मना जायते शूद्रः कर्मणा द्विज उच्यते**। अर्थात् जन्म से तो प्रत्येक मनुष्य शूद्र के रूप में होता है, पुनः वह अपने कर्म के माध्यम से ब्राह्मण,

---

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के रूप में विभाजित होते हैं। जो पढ़ने-पढ़ाने का काम करता हो, वह ब्राह्मण कहलावे, जो देश व राष्ट्र की रक्षा करने में लग जाये वह क्षत्रिय कहलावे, जो कृषि व वाणिज्य आदि करते हुए समाज का भरण-पोषण करने लगे वह वैश्य कहलावे और जो इन सवकी सेवा-शुश्रूषा करे वह शूद्र कहलाता है। इन सभी में छात्रों को कभी जातिवाद से लिप्त नहीं होना चाहिये। जातिवाद से लिप्त होकर छात्र पुनः उसी मार्ग में चला जाता है, जो कि नरक का द्वार है। अतः छात्र के लिये साम्यवादिता बहुत ही आवश्यक है। यह तो हम सभी जानते हैं कि किसी भी चीज का अति हो जाना काफी घातक होता है चाहे वह रिश्तो की मिठास हो या उनकी कड़वाहट खुशी हो या गम. हर तरीके से छात्रों को संतुलन बनाकर रखना चाहिए। यथा भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है कि सुख-दुख में हानि-लाभ में सभी को समभाव से रहना चाहिए। यथोक्तं- **सुखेदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ**। इसी प्रकार छात्रों को विषम परिस्थिति में चाहे वे असफल हो जावे तो भी शोक नहीं करना चाहिये।

उपसंहार -

इस संसार का समस्त घटक ईश्वर से युक्त है। समस्त प्राणी ईश्वर का रूप है। सभी जनमानस को **इदम् न मम** की भावना को लेकर अनवरत कर्म करते रहना चाहिये। यथोक्तं – **तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ।** अर्थात् त्यागपूर्वक निःस्वार्थ कर्म करते रहना चाहिये। यह सर्वविदित है कि कर्म में अपार शक्ति होती है । एक व्यक्ति का कर्म पूरे विश्व को सकारात्मक ऊर्जा दे सकता है अथवा उसे नकारात्मक ऊर्जा से बर्बाद भी कर सकता है। यथा - थॉमस अल्वा एडीसन ने कर्म किया था एक बल्ब बना कर और उसके कर्म का परिणाम आज भी दुनिया को मिल रहा और वर्षो तक मिलता रहेगा। आज हमें भी ऐसे ही कर्म करने की आवश्यकता है, अपने देश के लिए, अपने आप के लिए। जो कर्म वैदिक युग में हमारे ऋषि मुनियों ने किया था और जिसका आज भी हम गुणगान करते हैं, वही कर्म आज हमें फिर से करना है।

---

[1] श्रीमद्भगवद्गीता - 2.47

[2] वही – 2.38

[3] वही – 2.16

[4] वही – 2.20

[5] वही – 2.23,24

[6] वही – 2.60

[7] वही – 2..63

[8] वही – 16.21

[9] वही – 4.39

[10] वही – 4.40

[11] वही – 17.28